।।श्री राधा।।

रास पूर्णिमा

६ अक्टूबर २०२५

श्रीरासपूर्णिमा उत्सव २०२५
(शरद पूर्णिमा - सोमवार, ६ अक्टूबर २०२५)

(१) षोडश कीर्तन

परिचय - श्रीरासपूर्णिमा उत्सव में आप सभी का हार्दिक स्वागत है। जो सदस्य ऑनलाइन सम्मिलित हुए हैं, आपका भी हार्दिक स्वागत है। आज शरद पूर्णिमा की दिव्य रात्रि है।श्रीमद्भागवत् महापुराण में वर्णित है कि आज की रात्रि में भगवान् श्रीकृष्ण ने असंख्य गोपीजनों के संग मिलकर रास नृत्य किया था। 'रास' शब्द का मूल 'रस' है और 'रस' स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ही हैं। **रसो वै सः**। जिस दिव्य क्रीड़ा में एक ही रस अनेक रसों के रूप में होकर, अनन्त-अनन्त रस का समास्वादन करे एक रस ही इस समूह के रूप में प्रकट होकर स्वयं ही आस्वाद्य आस्वादक लीला, धाम और विभिन्न आलम्बन एवं उद्दीपन के रूप में क्रीड़ा करे- उसका नाम 'रास' है। यह रास वस्तुतः परम उज्जवल रस का दिव्य प्रकाश है। इस रस की स्फूर्ति तो परम भावमयी श्रीकृष्ण प्रेमस्वरूपा गोपीजनों के मधुर हृदय में होती है।

हम जैसे जीवों के लिये इस रात्रि के महत्त्व को परम पूज्य नानाजी ने समझाया था कि आज की रात आकाश अत्यंत स्वच्छ और निर्मल होता है - अर्थात् जब हमारा अंतःकरण अत्यंत निर्मल होता है, तभी श्री युगल सरकार के रासोत्सव का प्राकट्य संभव है। अंतःकरण शुद्ध करने के लिए वर्षभर जो भी जप-तप-साधन हमारे द्वारा किया गया है, श्री रासेश्वरी-रसराज अत्यंत कृपा करके उस साधन का फल आज शरद पूर्णिमा की इस दिव्य रात्री में हम सभी को प्रदान करते हैं। आज के रासोत्सव के माध्यम से श्रीयुगल सरकार अपने अलौकिक रस का वर्षण करके हम सभी के हृदयों को भक्तिरस से सिक्त कर देते हैं।

यह हमारा परम सौभाग्य है कि परम पूज्य बाबूजी, परम पूज्य श्री राधा बाबा एवं समस्त संत समाज के चरणों में बैठकर, उनके आश्रित होकर आज के रासोत्सव में हम सम्मिलित होने जा रहे हैं, उनके इस रस-दान को प्राप्त करने जा रहे हैं । उनकी इस असीम कृपा के आगे हम सभी नतमस्क हैं। आज का उत्सव परम पूज्य श्रीराधा बाबा की पुस्तक "**केलिकुञ्ज**" में वर्णित "**रासनृत्य लीला**" पर आधारित है।

आज के उत्सव में प्रत्येक व्यक्ति, चाहे ऑनलाइन हों, अथवा यहाँ श्री राधा निकुंज में उपस्थित हों, प्रत्येक व्यक्ति श्री रासेश्वरी-रसराज की एक विशेष सेवा कर सकता है - पदों को गाकर तथा उनके अर्थों पर चिंतन करके। हमारी इतनी सी चेष्टा के फलस्वरूप श्रीराधा आज के दिवस प्रत्येक जीवात्मा को अपने प्रियतम श्री कृष्ण का संस्पर्श कराकर सदा-सदा के लिए उसको रोग-शोक से मुक्त करा देती हैं। श्री राधा 'तत-सुख-सुखिया' भाव की मूर्तिमान स्वरूपा हैं। वे कटिबद्ध हैं कि जो भी जीव उनसे तनिक भी जुड़े हों, आज महारास के माध्यम से उन सब का कल्याण शीघ्रातिशीघ्र और सुखपूर्वक रीति से हो जाये - क्योंकि इसी से उनके प्रियतम श्रीकृष्ण को

सुख प्राप्त होगा। महारास के आधार में रस के आदान-प्रदान की मधुर परंपरा विराजित है। प्रियतम को सुख देने की चेष्टा से प्रियाजी अत्यंत आह्लादित होती हैं। और प्रियाजी के आह्लाद का दर्शन करके श्री कृष्ण, जो सभी जीवों के हृदय में स्थित हैं, उनको अपार सुख मिलता है। इस प्रकार पूरे महारास में प्रेम-भाव का रस ही प्रवाहित होता रहता है ।

श्रीमद्भागवत-महापुराण के दशम स्कंध में 'महारास' अध्याय के अंतर्गत परम पूज्य बाबूजी ने टिप्पणियों में लिखा है - 'रास' शब्द का मूल 'रस' है - और रस स्वयं भगवान् श्री कृष्ण ही हैं - **'रसो वै सः'।** ... भगवान् की यह दिव्य लीला भगवान् के दिव्य धाममें दिव्य रूपसे निरन्तर हुआ करती है। यह भगवान् की विशेष कृपासे प्रेमी साधकोंके हितार्थ कभी-कभी अपने दिव्य धामके साथ ही भूमण्डलपर भी अवतीर्ण हुआ करती है, जिसको देख-सुन एवं गाकर तथा स्मरण-चिन्तन करके अधिकारी पुरुष रसस्वरूप भगवान्‌की इस परम रसमयी लीलाका आनन्द ले सकें और स्वयं भी भगवान्‌की लीलामें सम्मिलित होकर अपनेको कृतकृत्य कर सकें।"

जिन गोपियों के साथ भगवान ने रास-नृत्य किया था, उनके दिव्य स्वरूप पर प्रकाश डालते हुए पूज्य बाबूजी कहते हैं - "भगवान्‌के समान ही गोपियाँ भी परम रसमयी और सच्चिदानन्दमयी ही हैं। साधनाकी दृष्टिसे भी उन्होंने न केवल जड शरीरका ही त्याग कर दिया है, बल्कि सूक्ष्म शरीरसे प्राप्त होनेवाले स्वर्ग, कैवल्यसे अनुभव होनेवाले मोक्ष - और तो क्या, जडताकी दृष्टिका ही त्याग कर दिया है। उनकी दृष्टिमें केवल चिदानन्दस्वरूप श्रीकृष्ण हैं, उनके हृदयमें श्रीकृष्णको तृप्त करनेवाला प्रेमामृत है। ... भगवान्‌के इस दिव्य-लीलाके वर्णनका यही प्रयोजन है कि जीव गोपियोंके उस अहैतुक प्रेमका, जो कि श्रीकृष्णको ही सुख पहुँचानेके लिये था, स्मरण करे और उसके द्वारा भगवान्‌के रसमय दिव्य लीला-लोक में भगवान् के अनन्त प्रेमका अनुभव करे।"

आज के उत्सव का प्रारम्भ करते हैं श्री रासेश्वरी-रसराज, उनकी सखियों व नित्य धाम श्रीवृन्दावन की स्तुति से । उनसे हम कातर प्रार्थना करें कि आज जो रसवर्षण की कृपा हम सब पर होने वाली है, उस कृपा का स्मरण कर हम सदैव कृतज्ञता से भरे रहें और मन-वाणी-शरीर से हमारी जो भी चेष्टा हो, उसको हम इसी भाव से सम्पादित करें कि उस चेष्टा से श्री प्रिया-प्रियतम को सुख मिले।

नमसतस्मै भगवते कृष्णायाकुंठमेधसे।
राधाधर सुधासिन्धौ नमो नित्य विहारिणे।।

ॐ कृष्णाय वासुदेवाय हरये परमात्मने।
प्रणतक्लेशनाशाय गोविन्दाय नमोः नमः।।

राधांकृष्ण स्वरूपांवै कृष्णं राधा स्वरुपिणम्।
कलात्मानं निकुंजस्थं गुरू रूपं सदा भजे।।

धन वृन्दावन धाम है, धन वृन्दावन नाम।
धन वृन्दावन वृक्ष जो सुमिरै स्यामा स्याम।।
जमुना जल अँचवन करैं, जमुना जल में न्हाहिं।
जहाँ-जहाँ जमुना बहै, तहाँ-तहाँ जम नाहि।।

अष्ट सखी करतीं सदा सेवा परम अनन्य।
राधा-माधव-जुगलकी, कर निज जीवन धन्य।।
इनके चरण-सरोज में बारंबार प्रनाम।
करुना कर दें श्रीजुगल-पद-रज-रति अभिराम।।

राधां रासेश्वरीं रम्यां गोविन्दमोहिनीं पराम्।
कृष्णप्राणाधिके राधे! नमस्ते परमेश्वरी।।

यो ब्रह्म रूद्र शुक नारद भीष्ममुख्यै रालक्षितो न सहसा पुरूषस्यतस्य।
सद्योवशीकरण चूर्णमनन्त शक्तिम् तं राधिका चरणरेणुमनुस्मरामि।।

सखियों ने श्री युगल सरकार को एक अत्यंत सुंदर आसान पर अब विराजित कर दिया है। एक सखी अपने हाथों में आरती का सुंदर थाल लेकर आती है। आरती उतारकर सखियाँ श्रीयुगल पर अपना सर्वस्व समर्पण कर अपने को उनकी रास सेवा में प्रस्तुत करती हैं।

गाओ सखी आरती प्रिया और प्यारे की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।
कंचन थार कपूर सजाओ, धूप दीप कर चँवर ढुलाओ
बलि बलि जावो सखी कुँज बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास विहारी की।
मोर मुकुट कुंडल वनमाला मुरली अधर धरे बैठे नन्दलाला
हिय में लखोरी छवि बाँके बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।
सीस चन्द्रिका की छवि न्यारी स्वेत बरन सोहे तन सारी
ललित किशोरी राधे वरसाने वारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।
बैठे सिंहासन दिए गलबाहीं रसिक जनन हिय बसत सदा ही
ब्रज जीवन धन रास बिहारी की
भानु दुलारी की गिरवर धारी की, हो रास बिहारी की।

भावार्थ- हे सखी! प्रिया और प्यारे की आरती गाओ। वृषभानु जी की लाडली की और गिरिराज पर्वत को धारण करने वाले भगवान् श्री कृष्ण की आरती गाओ। सोने के थाल पर कपूर सजाओ। धूप और दीपक जला कर चँवर ढुलाओ। हे सखि तुम कुंजों में विहार करने वाले बिहारी जी पर वारि वारि जाओ। श्री नन्दलाल मोर मुकुट, कुंडल और वनमाला धारण किये हुये, होठों पर मुरली धरे विराजित हैं। श्री रास विहारी की यह छवि हृदय में निहारकर भानुलली और गिरिवरधारी की आरती गाओ। श्री राधाजी के शीश पर चन्द्रिका की छवि बहुत ही सुन्दर लग रही है। तथा उनके गौरवर्ण शरीर पर साड़ी अत्यन्त शोभा पा रही है। बरसाने वाली वृषभानु लली और गिरिवर धारी श्री कृष्ण की आरती गाओ। श्री प्रिया प्रियतम गले में बांहे डालकर सिंहासन पर बिराजित है, उनकी यह छवि रसिक जनों के हृदय में सदा ही बसी रहती है। ब्रज के जीवनधन रास बिहारी की और वृषभानु लली की आरती गाओ।

आरती के उपरान्त वृन्दा सखी श्रीयुगल से प्रार्थना करती हैं, “प्यारे श्यामसुन्दर! अपने वन के समस्त चर-अचर प्राणियों की ओर से मैं प्रार्थना कर रही हूँ कि अपनी प्रिया एवं सखियों के साथ रास करके हम लोगों के नयनों को शीतल करो। प्यारे! असंख्य वर्षों से मैं तुम्हारा रास देख रही हूँ। प्रत्येक रात्रि को ही तुम रास रचाकर हमारे नयनों को शीतल करते हो; पर प्यारे श्यामसुन्दर! तुम्हारा यह रास नृत्य नूतन ही रहता है। मेरी प्रिय सहेलियों ने अत्यन्त उत्साह के साथ वेदी सजायी है। इस वेदी को अपने चरण-स्पर्श का दान करके मेरी सखियों एवं दासियों की सेवा स्वीकार कर लो।” वृन्दा सखी की प्रार्थना सुनकर प्रियतम श्रीप्रिया से रास मण्डल में पधारने की प्रार्थना करते हैं।

आज के उत्सव की सूत्रधारिणी हैं - रासेश्वरी श्री राधा। उन्हीं के संकल्प से रास-मंच प्रकट होता है, उन्हीं की रुचि और संकेतों के अनुसार ललिता आदि सब सखियाँ व मंजरियाँ लीला-व्यवस्था संपादित करती हैं। अतः स्वामिनी श्री राधा अब अपनी प्रिय सखियों से निवेदन करती हैं कि आज के महारास के लिए वे गायन-वादन आदि सम्पूर्ण प्रबंध ऐसी सुंदर, अनोखी रीति से संभालें कि जब श्री श्याम सुंदर मुरली बजाएँ और श्री राधा नृत्य करें, तब आनंद की रस धारा चारों और प्रवाहित हो।

हे ललिते गुन आगरी! तुम हो चतुर प्रवीन। सुन्दर साज समाज कौं बाँधो ठाठ नवीन।।
बीन विशाखा जी गहै चित्रा चतुर मृदंग। साज सितार सुदेवीजी तुम ललिते मुंहचंग।।
सारंगी श्री हरि प्रिया हितू रवाब विसाल। मधुर अलापैं उच्च स्वर इंदूलेखिका बाल।।
मनमोहन मुरली गहैं, मैं नाचूँ सजि साज। नदी बहै पुनि प्रेम की ऐसौ सजै समाज।।

भावार्थ- हे गुणों की खान ललिते! तुम चतुर और निपुण हो। सुन्दर सामग्री को जुटाकर एक अनोखी व्यवस्था करो। विशाखा जी वीणा सम्भालें, चतुर चित्राजी मृदंग। सुदेवीजी सितार सम्भालें और तुम ललिता मुहचंग। श्री हरिप्रियाजी सारंगी सम्भालें और हितु सखी विशाल रवाब। इन्दूलेखा जी उच्च स्वरों में मधुर आलाप लें। श्री श्यामसुन्दर मुरली बजाएँ, मैं सब के साथ नाचूँ। ऐसी व्यवस्था हो कि प्रेम की नदियाँ बहें।

या विधि आज प्रबंध करो सखि! आनन्द की रस धार बहैगी।
प्रीतम के मन की रुचि है यहि, मेरे हिये अभिलाषा पुजैगी।।
तुम सबहू सुख पावौ महा रस, आनन्द बेलि हिये उलहैगी।
बरसै घन आनन्द प्रेम महा, तब सहजहि बेली फूलि फरैगी।।

भावार्थ- हे सखी! आज इस प्रकार से प्रबंध करो कि आनन्द की रस धार बहे। प्रीतम के मन में यही रुचि है, और ऐसा करने से मेरे मन की भी अभिलाषा पूरी होगी। इस महारास के प्रवाह में तुम सब सुख पाओ, हृदय में आनन्द की छटा से जब प्रेम की वर्षा होगी तब यह लता सहज ही (बिना किसी प्रयत्न के) फूलेगी-फलेगी।

रास का नृत्य आरम्भ करने के लिए श्री प्रिया-प्रियतम अब रास-वेदी पर पधार रहे हैं। परम पूज्य श्री राधा बाबा ने "रासनृत्य लीला" में वर्णन किया है कि जैसे-जैसे नृत्य का क्रम आगे बढ़ता रहता है, उसी के अनुरूप नृत्य करते-करते श्रीकृष्ण, श्रीराधा और सखियों द्वारा किस प्रकार के भिन्न-भिन्न आकार धारण किये जाते हैं। पूज्य बाबा ने पाँच आकारों के मानचित्र भी प्रस्तुत किये हैं, जो यहाँ रास वेदी के मध्य में दर्शाये गए हैं। श्री रासेश्वरी-रसराज अपनी सखियों के साथ अब **प्रथम मण्डल के आकार** में स्थित हो जाते हैं। श्री प्रिया-प्रियतम के हृदय में रास-नृत्य आरम्भ करने की लालसा शीघ्रातिशीघ्र बढ़े, इसके लिए समस्त प्रकृति का कण-कण जुट जाता है - भिन्न भिन्न प्रकार के पुष्प सब मिलकर वायुमंडल में भीनी-भीनी सुगंध प्रवाहित करते हैं, और शीतल समीर उस मनमोहक सुगंध को श्री प्रिया-प्रियतम तक पहुँचा देता है, मानो उन्हें नृत्य आरम्भ करने के लिए आमंत्रित कर रहा हो। यह अगला पद पूज्य बाबा के 'मधुपर्क' से लिया गया है और उनके प्रिय पदों में से एक है -

रास मंडल रच्यो रसिक हरि राधिका
तरनिजा तीर वानीर कुंजे।
फूले जहाँ नीप नव बकुल कुल मालती
माधुरी मृदुल अलि पुंज गुंजे।।
सुमन के गुच्छ अलि सुच्छ चल बात बल
तरू मनो चहुँ दिसि चँवर करहीं।
करत रव सारि सुक पिक सु-नाना विहँग
नचत केकि अधिक मनहिं हरहीं।।

भावार्थ- यमुना के किनारे वेत्र-कुंज में रसिक शिरोमणि श्रीश्यामसुन्दर एवं श्रीराधा ने रास-मण्डल की रचना की है। वहाँ पर कदम्ब, मौलश्री एवं मालती के नये-नये असंख्य पुष्प खिल रहे हैं। उनके माधुर्य से आकृष्ट होकर भौंरो के समूह मृदुल गुंजार कर रहे हैं। फूलों के गुच्छों को स्पर्श करता हुआ अत्यन्त निर्मल पवन चल रहा है। उसके प्रभाव से हिलते हुए हरे-हरे वृक्ष ऐसे लग रहे हैं मानो चारों ओर चँवर डुला रहे हैं। मैना, तोता, कोयल तथा और भी अनेक सुन्दर-सुन्दर पक्षी कलरव कर रहे हैं। नृत्य करते हुए मोर चित्त को और भी अधिक खींच लेते हैं।

त्रिगुन जहाँ पवन को गवन नित ही रहत
बहत स्यामल तटनि चल तरंगा।
विविध फूले कमल कोक कलहंस कुल
करत कल कुणित अरू जल विहंगा।।
हेम मंडल रचित खचित नाना रतन
मनहुँ भू करन कुंडल विराजे।
बंस वीनादि मुहचंग मिरदंग वर
सबन मिलि मधुर धुनि एक बाजै।।

भावार्थ: शीतल, मन्द एवं सुगन्धित समीर का वहाँ सदा ही संचार होता रहता है उसकी गति से तरंगे चंचल हो उठती हैं। ऐसी चंचल तरंगों से युक्त श्यामलवर्णा यमुनाजी बहती रहती हैं। यमुनाजी में विविध प्रकार के कमल (जैसे उत्पल कुशेशय, इन्दीवर इत्यादि) खिले हुए हैं तथा चक्रवाक, कलहंसों का समूह एवं अन्य जाति के जल-पक्षी भी मधुर स्वर कर रहे हैं। रास की गोलकार स्वर्ण-वेदी नाना रत्नों से जड़ी हुई है। वह ऐसी लगती है मानो पृथ्वी का कर्ण-कुण्डल हो। बांसुरी

एवं वीणादिक तार-यंत्र, मुहचंग और अच्छे-अच्छे मृदंग - ये सभी मिलकर एक स्वर में मधुर ध्वनि उत्पन्न कर रहे हैं।

नचत रस मगन वृषभानुजा गिरिधरन
बदन छवि देखि सुधि जात रति मदन की।
मुकुट की थरहरनि पीत पट फरहरनि
तत्त थेई करनि हरनि सब कदन की।।
दसनि दमकनि हँसनि लसनि अँग अँग की
अधर वर अरुन लखि उपमा को है।
दृग जलज चलनि ढिग कुटिल अलकनि झुलनि
मनहुँ अलि कुलन की पाँतियाँ सोहै।।

भावार्थ: रस में मग्न होकर राधा-माधव नाच रहे हैं। उनके मुख की शोभा देखकर रति और काम भी बेसुध हो जाते हैं। मुकुट के थरहराने से, पीत पट के फरहराने से तथा ताता-थेइके उच्चारण से जो झाँकी उभरी, वह सारे क्लेशों का निवारण करने वाली है। दाँतों की चमक, मन्द हास्य, प्रत्येक अंग की शोभा तथा मनोहर अधरों की अरुणिमा - इन सबके दर्शन की तुलना में और क्या है? कमलदल से सुन्दर एवं चपल नेत्रों के समीप ही कुंचित केश की लटें ऐसी झूल रही हैं मानो भ्रमरों की पंक्तियाँ सुशोभित हों।

लाग अरु डाट पुनि उरप उरमेइ
तिरप एक एक गति लेत भारी।
करत मिलि गान अति तान बंधान सों
परस्पर रीझि कहैं वार्यो वारी।।
चारु उर हार वर रतन कुंडल ललित
हीर वर वीर स्त्रवननि सुहाई।
नील पट पीत तन और गौर स्यामल मनौ
परस्पर घन अरु दामिनि दुराई।।

भावार्थ: स्नेहपूरित प्रतिस्पर्धा से वे उरप-तिरप आदि एक-एक गति-विशेष को बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रदर्शित करते हैं। वे बंधानयुक्त तान लेते हुए परस्पर मिलकर अत्यन्त सुन्दर गा रहे हैं और एक दूसरे पर मुग्ध होकर ‘बलिहारी जाऊँ’ कह रहे हैं। सुन्दर वक्षःस्थल पर रत्नों का मनोहर हार है और हे सखि! कानों में श्रेष्ठ हीरे के बड़े ही सुन्दर कुण्डल सुशोभित हो रहे हैं। श्री राधिका के गोरे अंगों पर नीला परिधान एवं श्रीकृष्णके श्याम शरीर पर पीताम्बर ऐसे लग रहे हैं मानों एक ओर बादल ने बिजली को अपनी गोद में छिपा लिया है और दूसरी ओर विद्युच्छटाने वारिदमाला को आक्रोड़ित कर लिया है।

सखी चहुँ दिसि बनी कनक चंपक तनी
चंद वदनी इक एक तें आगरी।
नचत मंडल किए चित्त दुहु तन दिए
भूलि गई सकल अप अपनी सुधि नागरी।।
रमत इहि भाँति नित रसिक सिरमौर दोऊ
संग ललितादि लिए सुघरि सुंदरि अली।
मनसि वृंदावन बसहुँ जीवन धना
व्रजराज सून वृषभानुजू की लली।।

भावार्थ: उन्हें चारों ओर से सोने एवं चम्पा के फूल-जैसे वर्णवाली चन्द्रमुखी सखियाँ घेरे हुए हैं। वे सब शोभा में एक-से-एक बढ़कर हैं। वे परम प्रवीण सखियाँ गोलाकार मण्डल बनाकर नाच रहीं हैं। उनका चित्त राधामाधव में ऐसा लीन है कि सब अपनी-अपनी सुधि खो बैठी हैं। ललितादिक सखियों को साथ लेकर रसिकों के शिरोभूषण ये दोनों इस प्रकार नित्य ही विहार किया करते हैं। ये सभी सखियाँ चतुर तथा सुन्दर हैं। वृन्दावनदेवजी कहते हैं कि 'हे मेरे जीवनधन ब्रजराज लाडिले एवं वृषभानु लाडिली! तुम दोनों मेरे हृदय-कमल में नित्य ही निवास करो।'

नृत्य का क्रम आगे बढ़ाते हुए अब श्री प्रिया-प्रियतम **दूसरे मण्डल** की रचना करते हैं। श्री राधा रानी अपने प्रियतम को सुख पहुँचाने के लिए अत्यंत आतुर हैं, और उल्लास में भरकर वे इस प्रकार से नृत्य करती हैं कि उनके पग-नूपुरों से भी 'प्रियतम' शब्द की ध्वनि निकलती है। इस प्रकार अपने नृत्य के माध्यम से श्री राधा अपने प्रियतम श्यामसुंदर का प्रेमिल स्पर्श सभी को प्रदान करती रहती हैं, क्योंकि वे जानती हैं कि उनके प्रियतम की भी यही रुचि है। ऐसी करुणामयी स्वामिनी की सदा ही जय हो !

प्यारी निरतत रँग में आज।
(एरी) स्याम बरन अति ललित साँवरो, प्यारी हिय सरताज।।
ता-थेइ तत-थेइ गति अति न्यारी, रिझवत पिय कूँ आज।
पग नूपुर 'प्रीतम' झनकारत, तजि सकल हिय लाज।।
प्रेम मिलन की सुन्दर बेला, हिय में मोद विराज।
सकल प्राण पिय पद न्यौछावर, कण-कण पिय रुचि साज।।
सरद रैन मधि रूप उजियारी, सकल प्रेम को राज।
निरतत राधा सँग-सँग प्रीतम, कहा लाज को काज।।

भावार्थ - श्री राधा आज प्रेम व उमंग में भर कर नृत्य कर रही हैं। मन में अपने हृदय के मुकुट-मणि श्री कृष्ण का स्मरण करती जा रही हैं। 'ता-थेइ तत थेइ' की सुंदर नृत्य गति से अपने प्यारे को रिझा रही हैं - यहाँ तक कि उनके पैरों के नूपुरों से भी 'प्रियतम' शब्द की ही ध्वनि निकल रही है। अपने हृदय का समस्त संकोच छोड़कर नृत्य करते हुए श्री राधा उमंग में भरी हुई हैं कि प्रेम मिलन का सुंदर समय अब आ ही गया है। श्री राधा के समस्त प्राणप्यारे श्री कृष्ण के चरणों में समर्पित हैं, उनके अंगों के एक-एक कण में प्रियतम की रुचि ही बसी हुई है। सुंदर शरद रात्री में प्रिया श्री राधा का रूप अतिशय शोभा पा रहा है। सर्वत्र फैले हुए इस प्रेम राज्य में उल्लसित होकर, सब संकोच छोड़कर प्रियाजी प्रियतम श्री कृष्ण नृत्य कर रही हैं।

अब रास मण्डली आगे बढ़कर **तीसरे मण्डल का आकार** धारण करती है । नृत्य करते-करते श्री प्रिया-प्रियतम अपने नेत्रों, अपनी भाव भंगिमाओं के माध्यम से एक दूसरे की स्तुति करते रहते हैं।

श्री कृष्ण कहते हैं कि - हे राधे, जब आपकी भृकुटि के विलास से समस्त जगत नाचता है - तो आपको देखकर मेरा स्वतः ही नृत्य में प्रवृत्त होना कोई आश्चर्य की बात नहीं है ! इस पर श्रीराधा संकेत करती हैं, हे बृजकिशोर! मैं आप पर तृण तोड़कर अपना सर्वस्व बलिहार देती हूँ । आपकी मुरली की टेर सुनकर तो मेरा मन मोर के समान नृत्य करने लगता है। श्रीकृष्ण पुनः कहते हैं - राधे! आपका मुख चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर है और मेरे नेत्र चकोर पक्षी के समान उनको निहारते-निहारते अघाते नहीं हैं। इसपर श्रीराधा कहती हैं, हे प्यारे आपका गर्दन को एक ओर

झुका देना एवं नयनों का मटकाना मेरे मन को हर लेता है। श्रीकृष्ण कहते हैं, हे राधे! मेरा मन तो निरंतर आपके रंग में रंगा हुआ है, मुझे आप कृपा करके दिन-रात अपने पास ही रखिएगा। वैसे भी ये पतंग (अर्थात् मैं) कहाँ जायेगी अब मेरी डोर आपके ही हाथ में है।

बन नाचे नट नीको आली नन्द को किशोर।
राधे जगत नचायो तेरी भौं की मरोर।।
ब्रज के किशारे तौ पै डारूँ तृण तोर प्यारो।
सुनी मुरली की धुन मेरो मन भयो मोर।।
कमल कली को रँग भानु की लली को स्यामा।
मुख चंद्रहुँ सो नीको मेरे नयना हैं चकोर।।
ग्रीवा की लटक हरे नयन की मटक प्यारो।
करे चित्त पै झपट पीरे पटका को छोर।।
मुख की भुराई भाल बिंदिया सजाई स्यामा।
मानो छीर सिन्धु माहीं बाल रवि उग्यो भोर।।
नयनन बसाय तोहैं राखूँगी छिपाये प्यारो।
कहूँ भाग न जाय मेरी मुँदरी को चोर।।
मन स्याम रँग दिन रैन राखो सँग स्यामा।
कहाँ जायेगी पतँग तेरे हाथ में है डोर।।

भावार्थ - हे राधे, देखो! नटनागर नन्दकिशोर श्रीकृष्ण वन में अति सुन्दर नृत्य कर रहे हैं। ऐसा क्यों न हो! जब आपकी भृकुटि के विलास से समस्त जगत नाचता है - तो आपके प्रियतम श्रीकृष्ण नृत्य में प्रवृत्त हों तो इसमें आश्चर्य ही क्या है? श्रीराधा कहती हैं, हे बृजकिशोर! मैं आप पर तृण तोड़कर अपना सर्वस्व बलिहार देती हूँ (समर्पण कर देती हूँ)। आपकी मुरली की टेर सुनकर तो मेरा मन मोर के समान नृत्य करने लगता है। श्रीकृष्ण कहते हैं हे वृषभानु की पुत्री राधे! आपका रंग कमल कली के समान अरूणाई लिये हुए है। आपका मुख चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर है और मेरे नेत्र चकोर पक्षी के समान उनको निहारते-निहारते अघाते नहीं हैं। श्रीराधा कहती हैं, हे प्यारे आपका ग्रीवा (गर्दन) को एक ओर झुका देना एवं नयनों का मटकाना मेरे मन को हर लेता है, उससे मेरे मन का भटकाव रूक जाता है (अर्थात् मेरा मन आपकी इस अदा को निहारने में टिक जाता है)।आपके पीले पटके की छोर इतनी सुंदर है कि उसका दर्शन कर मेरे मन में बिजली-सी कौंध जाती है। श्रीकृष्ण कहते हैं , हे राधे! आपके मुख पर जो पीलेपन की झांकी है, उस पर जो आपने अपने सुंदर माथे के मध्य में लाल बिंदी सजाई है - ऐसे लगता है जैसे दूध का सागर हो, और उसमें सुबह का लाल-लाल सूरज उग रहा हो। श्रीराधा कहती हैं, हे प्यारे! आपको नैनों में बसाकर, छिपाकर रखूँगी। (डर लगता है कि) मेरी अँगूठी के चोर (आप) कहीं भाग न जाएं (यहाँ यह एक अन्य लीला की ओर संकेत है जिसमें श्रीकृष्ण राधाजी की अँगूठी चुराकर ले जाते हैं) श्रीकृष्ण कहते हैं, हे राधे! मेरा मन तो निरंतर आपके रंग में रंगा हुआ है, मुझे आप कृपा करके दिन-रात अपने पास ही रखिएगा।

सोनजुही की बनी पगिया अरू चमेली को गुच्छ रहयौ झुकि न्यारो।
द्वै दल फूल कदंब के कुंडल सेवती जामाहु घूम घुमारो।।
नौ तुलसी पटुका घनस्याम गुलाब इजार चमेली को न्यारो।
फूलन आज विचित्र बन्यौ देखो कैसो सिंगारयो है प्यारी ने प्यारो।।

भावार्थ - और इधर देखो! राधा प्यारी ने अद्भुत पुष्प-रचना के द्वारा प्यारे श्रीकृष्ण चन्द्र का कैसा श्रृंगार किया है। सोनजुही पुष्पों की तो पगड़ी बनी हुई है, जिसमें चमेली का एक गुच्छा निराली अदा से लटक रहा है। कदम्ब पुष्पों का खूब घेरदार जामा है। नीलसुन्दर की विविध रंगवाली चादर की छवि और भी निराली है, जिसमें नाना वर्णों के नव तुलसीदल, विभिन्न प्रकार के गुलाब, गेंदा और चमेली के पुष्पों का उपयोग किया गया है।

नाचत बलभद्र वीर संग लिये युवती भीर।
रासरच्यो दिव्य तीर तनिया कलिन्द की।।
नाच उठी यमुन लहर चन्द चाँदनी को पहर।
पीत पटि लहर-लहर नाची नन्द-नन्द की।।

भावार्थ- बलरामजी के भाई श्रीकृष्ण युवतियों की भीड़ को लेकर यमुनाजी के दिव्य तट पर नृत्य कर रहे हैं। वहाँ यमुनाजी की लहरें चमकती चाँदनी में नाच उठी हैं, तो यहाँ श्री कृष्ण का पीताम्बर भी (उसी प्रकार दमकता हुआ) लहरा रहा है।

नचे बाल तालन पै श्रम बिन्दु भालन पै।
सजी कमल मालन पै अवलि अलि वृन्द की।।
राधा रंग राच रही पलक खोल जाँच रही।
नैनन में नाच रही मूरति गोविन्द की।।

भावार्थ- सभी ब्रजबालाऐं संगीत की ताल पर नृत्य कर रही हैं, जिससे उनके मस्तक पर श्रम बिंदु झलक रहे हैं। समस्त सखी मण्डल के वक्षःस्थल पर कमलों की मालाएं सजी हुई हैं जिसपर भौरों की पंक्तियाँ मँडरा रही हैं। प्रेम में रची (डूबी) हुए श्री राधारानी इस दृश्य को पलक खोलकर निहारती हुई प्रतीत हो रही है परंतु (वास्तव में अंदर-ही-अंदर) उनकी आँखों में श्री गोविन्द की मूर्ति ही नृत्य कर रही है।

सारी सँवारी है सोनजुही अरू जूही की तापै लगाई किनारी।
पंकज के दल को लहँगा अंगिया गुलबाँस की सोभित न्यारी।।
चम्पा को हार हमेल गुलाब को मौर की बेंदी दे भाल सँवारी।।
फूलन आज बिचित्र बन्यो देखो कैसी सिंगारी है प्यारे ने प्यारी।।

भावार्थ - देखो! प्यारे श्रीकृष्ण ने अद्भुत ढंग से सजाकर प्रियाजी का आज कैसा श्रृंगार किया है! सोनजुही पुष्पों की साड़ी सजायी है, जिसमें जूही की किनारी लगी हुई है। कमल पुष्प दलों से लहँगा बनाया है और गुलबाँस की कञ्चुकी (चोली) अपनी निराली ही छटा दिखा रही है। चम्पा के पुष्पों का हार बनाया है और गुलाब का हमेल है तथा ललाट पर मौलसिरी के फूल की बेंदी शोभा दे रही है।

तालन पै ताल पै तमाल माल मालन पै। वृन्दावन वीथिन विहार वंशी वट पै।।
छित पै छात पै छाजत छटान पै। ललित लतान पै श्री लाडली की लट पै।।
कहे पद्माकर अखण्ड रास मण्डल पै। मण्डित उमण्डित श्री कालन्दी के तट पै।।
कैसी छवि छाई आज सरद जुन्हाई। कैसी छवि छाई या कन्हाई के मुकुट पै।।

भावार्थ - (श्री वृन्दावन की शरद रात्रि की शोभा का वर्णन करते हुए रसिक कवि पद्माकर कहते हैं कि) ताल और तमाल वृक्षों की श्रेणियों पर, श्री वृन्दावन की सुन्दर विहार - पगडंडियों पर, निकुंज भवनों के छज्जों पर, सुन्दर लताओं पर, श्री लाडिली जी की गिरती हुई कुन्तलों पर, यहाँ तक कि सम्पूर्ण रास मंडल पर, शरद रात्रि की चाँदनी अतिशय सुन्दर ढंग से चमक रही है। और इस चाँदनी की सबसे सुन्दर छटा तो श्री कन्हैयाजीके मुकुट से छिटक रही है।

श्री राधा के हृदय में यह त्वरा निरंतर उमड़ती रहती है कि हर जीवात्मा को श्री कृष्ण का स्पर्श-सुख वे कैसे अनुभव करा सकती हैं। उनका यह तत्सुख-सुखिया भाव प्रियतम श्यामसुंदर को इतना प्रिय लगता है कि वे अपनी प्रिया के चरणों में न्यौछवार हो जाते हैं । इसे दर्शाते हुए अगले पद के आरंभ में वर्णन आता है कि 'जहाँ जहाँ प्यारी पग धरे, लाल धरे दोउ नैन' - जहां-जहां श्री राधा के चरण पड़ते हैं, वहाँ-वहाँ श्री कृष्ण अपने नैन बिछाये रहते हैं । दोनों एक-दूसरे पर ऐसे रीझे हुए हैं कि उनके वस्त्र-आभूषण एक-दूसरे से उलझ ही जाते हैं - कभी श्री कृष्ण का कुंडल श्री राधा की अलकों में उलझ जाता है, तो कभी श्री राधा की बेसर श्री कृष्ण की वनमाला में। परंतु, वास्तव में श्री युगल के चित्त ही आपस में उलझते जा रहे हैं। इस प्रकार **चौथे मण्डल का आकार** धारण कर क्रम-क्रम से कभी श्री राधा नृत्य करती हैं, कभी श्री कृष्ण, और कभी दोनों ही एक होकर महाभाव की स्थिति में डूबकर नृत्य करते हैं ।

उत उरझी कुंडल अलक, इत बेसर बनमाल।
गौर-स्याम उरझे दोऊ, मण्डल रास रसाल।।
प्रेम सरोवर प्रेम की, भरी रहे दिन रैन।
जहँ-जहँ प्यारी पग धरें, लाल धरें दोऊ नैन।।
जय जय राधे श्याम...

भावार्थ - इधर श्री राधा के कुंडल में श्री श्यामसुंदर की अलक उलझ गई, उधर श्री श्यामसुंदर की वनमाला में किशोरीजी की नक-बेसर उलझ गई। इस प्रकार से गौर-स्याम श्री राधा-कृष्ण रास मण्डल में परस्पर में उलझ गए। प्रेम रूपी सरोवर दिन-रात इस प्रेम से पूर्णरूपेण भरा ही रहता है। जहाँ-जहां श्री राधा (नृत्य करते हुए) अपने चरण धरती हैं, वहीं श्री कृष्ण के दोनों नेत्र बिछे ही रहते हैं।

सेवती चमेली बेली मालती निवारी कुंद
खिल रहे फूल खिली चाँदनी हूँ चंद की
नुपूर सितार बीन बाँसुरी मृदंग बाजे
नृत्यति गोपाल तीर तनिया कलिंद की
नाच उठे मोर, चारों ओर सो प्रकाश देखि
कमलन पै नाच रही अवली अलिवृन्द की
आगे गति नार एक केसर में नाच रही
बेसर में नाच रही मूरत गोविन्द की

भा**वार्थ-** कुंजों में सेवन्ती, चमेली तथा जूही की लतायें हैं। वहाँ फूल खिले हुये हैं और चन्द्रमा की चाँदनी भी खिली-खिली छिटक रही है। नूपुर, सितार, वीणा, बाँसुरी तथा मृदंग बज रहे हैं। यमुना जी के तट पर पीताम्बर पहने हुए गोपाल नृत्य कर रहे हैं। चारों ओर उस दिव्य प्रकाश को देखकर मोर नाच उठे तथा कमलों पर भ्रमर-पंक्ति नृत्य कर रही है। एक सखी तेज़ गति लिए नाच रही है और साथ में उसके बेसर में श्यामसुन्दर की भी मूर्ति नृत्य करती हुई झलक रही है।

लै फिरकी खिड़की ते गिरी। सखी आए गयो मोय प्रेम तमारो।
मोहन नैन के बान लगे मुरझाइ परी कोई आए सम्हारो।।
वीर सरीर की यह गत है गई वैद मिले मोय नंददुलारौ।
खोल री घूँघट खोलूँ कहा बसो आँखिन मोर की पाखन वारो।।

भावार्थ- तेज़ गति से नृत्य करती हुई वह गोपी खिड़की से फिरकी की तरह गिर गई। अपनी दशा बताते हुए कहती हैं, "हे सखी! मुझे प्रेम रूपी बुखार ने आ घेरा है। मोहन के नयन रूपी बाणों से बिंधकर मैं मुरझाकर गिर पड़ी हूँ, कोई आकर मुझे सम्भालें। अरे सखी! मेरे शरीर की क्या गति हो गई है। नंद के दुलारे ही मेरे वैद्य हैं - वे शीघ्र मुझे कब मिलेंगे।" दूसरी सखी कहती हैं, "शीघ्र घूँघट खोल और दर्शन कर लें।" परंतु पहली सखी हँस के पुनः कहती है, "हे सखी! घूँघट क्यों खोलूँ जब मेरे नयनों में ही मोर का पँख धारण किये हुए श्यामसुन्दर आ बसे हैं।"

मण्डल रास विलास महारस, मण्डल श्रीवृषभानु दुलारी
मण्डित गोप संगीत भरी, उत राजत कोटिक गोप कुमारी
प्रीतम के मुख कंज पे सोभित, अनंदन अंग अनंग निवारी
ताल तरंगन रंग बढ्यो ऐसे राधिका माधव की बलिहारी

भावार्थ- रास नृत्य के मण्डल में आज महान आनन्द रस बह चला है। उस मण्डल में श्री राधा अत्यन्त विभूषित हैं। वह रास मण्डल कोटि-कोटि गोपकुमारियों की सुन्दर स्वर लहरियों से गुंजायमान है। प्रियतम श्री कृष्ण के मुख पर छाये हुए आनन्द की शोभा एसी है जो कामदेव की शोभा को लज्जित कर दे। सारा वातावरण ताल और स्वर के रंग से भर रहा

नंदलाला बन्सी वाला। बसिया कैसी बजाई गईए रे
फिर बजाओ बांसुरी मैं वारी बंसी वारे जाते सुनत नींद नहीं रैन गिनत तारे
मोहि लई सब ब्रजनारी मैं वारी प्यारे सुन छैया, कन्हैया, मनभैया, हरजैया रे
सुनत बंसी सुधि-बुध बिसरी, लोक लाज कुल की सगरी सुन कान्हा मनमाना जगजाना पहचाना रे।

भावार्थ- हे सखी, नंद के लाल ने कैसी सुंदर बंसी बजाई है! हे बंसीवाले! जिस वंशी ध्वनि से हमारी रातों की नींद उड़ गई है और सारी निशा हम बस बैठकर तारावली गिनती रहती हैं, हम विनती करती हैं, हमे फिरसे वह बंसी सुनाओ। हमारे मन की आशाओं को तोड़ने वाले कन्हैया! आपने समस्त ब्रज की नारियों का मन हर लिया है। आपकी वंशी ध्वनि को सुनकर हम लोक-लज्जा की सारी स्मृति भूल गयी हैं। सुनो कान्हा आपकी मनमानी को सारा जग पहचान चुका है।

इसके पश्चात श्री रास मण्डल नृत्य करते करते अब **<u>पाँचवे मण्डल</u>** की रचना करता है । श्री प्रिया-प्रियतम के भाव अब गहन-अतिगहन होते जाते हैं, और उनके नृत्य द्वारा चारों दिशाओं में एक अनुपम रस सहज ही प्रवाहित होता जाता है। पूज्य बाबूजी के वचन हैं - "भगवान् की यह दिव्य लीला भगवान् के दिव्य धाममें दिव्य रूपसे निरन्तर हुआ करती है।" परम पूज्य बाबा के श्री जय जय प्रियतम महाकाव्य में भी इसका संकेत दिया गया है कि श्री प्रिया-प्रियतम का यह नृत्य अनवरत चलता रहता है - काल की सीमा से परे ।

कबतक चलता वह नृत्य अहो! कैसे बतलाऊँ मैं, प्रियतम!
आँखों में है अब तक पूरित हल्लीसक मुद्राएँ, प्रियतम!
शशधर है ठीक मध्य नभमें वैसे ही गति भूले, प्रियतम!
वे मुग्ध देखते हैं साँवर, बाला है नाच रही, प्रियतम!

भावार्थ - यह नृत्य कब तक चलता अहो! मैं कैसे बतलाऊँ? अभी तक आँखों में हल्लीसक मुद्राएँ ज्यों-की-त्यों परिपूतिरत हें। निर्मल मध्य नभ के बीच में चन्द्रमा गति-भूले वैसे ही अवस्थित हैं। मुग्ध होकर सब देख रहे हैं, सबकी आँखें केन्द्रित हैं - गौर-नीलदम्पति के मनोहर नृत्य पर।

वैसे ही कटि झुक जाती है बालाकी पल-पल में, प्रियतम!
अम्बर वक्षःस्थलका भी वह, वैसे ही चंचल है, प्रियतम!
वे कुण्डल भी वैसे ही हैं, हो रहे चपल दोनों, प्रियतम!
आनन-सरोजपर वैसे ही प्रस्वेद कणावलि है, प्रियतम!

भावार्थ - पल-पल में राधा किशोरी की कटि उस भाँति ही झुक जाती है। वक्षस्थल का अञ्चल भी वैसे ही चञ्चल हो रहा है। दोनों कर्णकुण्डल भी वैसे ही चञ्चल हो रहे हैं, और मुख कमल पर वैसे ही प्रस्वेदकण झलमल रहे हैं।

गिर रहे फूल वैसे ही हैं झर-झरकर अलकों से, प्रियतम!
साँवर अपने दुकूलमें हैं कर रहे चयन उनको, प्रियतम!
वैसे ही नाच-नाच करके साँवर भी, बालाकी, प्रियतम!
कर रहे सरस अनुमोदन हैं उन नृत्य-भंगियों का, प्रियतम!

भावार्थ - अलकों से सुमन झर-झरकर वैसे ही रासस्थल को विभूषित कर रहे हैं। नील सुन्दर अपने पटके में उन सुमनों को चयन करते जा रहे हैं। उस भाँति ही नाच-नाचकर साँवर भी बाला की नृत्यभङ्गिमा का सरस अनुमोदन कर रहे हैं।

रसमय तंत्रोंके तार सभी वैसे ही झंकृत हैं, प्रियतम!
वैसे ही नूपुरका रुन-झुन सहयोग दे रहा है, प्रियतम!
वैसे ही तालबध भी है पल-पल नवीन होता, प्रियतम!
वैसे ही बज उठती है वह साँवरकी करताली, प्रियतम!

भावार्थ - रसमय तंत्रों के तार वैसे ही झंकृत हो रहे हैं। नूपुर का रुनझुन शब्द वैसे ही सहयोग दे रहा है। ताल की रचनाएँ उस भाँति ही पल-पल में नवीन होती जा रही है, और वैसे ही रह-रहकर नीलसुन्दर की हाथों से ताली भी बज उठती हैं। अस्तु।

इसपर मैं किंतु सरस झीना आवरण डालकर ही, प्रियतम!
आगे चलती हूँ बालाको, साँवर को ले दृगमें, प्रियतम!
उस ओर नृत्य उन दोनों का अविराम चल रहा हैं, प्रियतम!
वे उधर उसी क्षण हैं निकुञ्ज पथमें भी चल पड़ते, प्रियतम!

भावार्थ - इस पर मैं एक सरस झीना परदा डालकर ही आगे चल रही हूँ। साँवर को, राधाकिशोरी को अपनी आँखों में लिये हुए ही आगे बढ़ रही हूँ। उस ओर उन दोनों का नृत्य भी बिना विराम चल ही रहा है। साथ ही उधर देखो, उसी क्षण वे निकुञ्जपथ में भी चल पड़े हैं।

सब सखियाँ-मंजरियाँ अब समझ जाती हैं कि नृत्य करते करते अब श्री प्रिया-प्रियतम कुछ श्रमित से हो रहे हैं, अतः वे एकजुट होकर भिन्न-भिन्न सेवाओं और उपायों से उनका श्रम दूर करने की चेष्टा करती हैं - कभी उनको जल पिलाकर, कभी उनको पंखा झलकर, कभी तृण तोड़कर उनकी नज़र उतारकर, कभी उनको सुस्वादु व्यंजन पवाकर। अपने इस दिव्य रासोत्सव में, इस रस वर्षण में श्री रासेश्वरी-रसराज ने हमें भी सम्मिलित किया, इस महती कृपा के लिए आभार रूप में आइये सब सखियों-मंजरियों के साथ मिलकर हम भी मानसिक रूप से उनकी सेवा करें, उनका श्रम दूर करें।

रास करि बैठे दोऊ पवन करति कोऊ
लै लै अंचल सौं पौछे स्त्रम वारि री।
करति प्रसंस कोऊ प्रेम भींजिं रहीं कोऊ
कोऊ रही रीझि बिबि बदन निहारि री।।
कोऊ पुहुपांजुलि वारें कोऊ तृन तोरि डारें
कोऊ जल पीबत हैं बार बार वारि री।
कोऊ रीझि गावनि पै कोऊ रीझि निर्तनि पै
वृन्दावन हित रूप करैं मनुहारि री।।

भावार्थ - अद्भुत रास करके श्रीप्रिया-प्रियतम सुन्दर सिंहासन पर आसीन है। उनको विश्राम देने हेतु कोई सखी उन्हें पंखा डुलाने लगती है और कोई अपने आंचल से उनके श्रम बिन्दु पौंछने लगती है। एक सखी उनकी प्रशंसा करती है तो दूसरी सखि उनके प्रेम में डूबती जा रही है। कोई सखी पुष्पांजलि छोड़ती है, कोई तृण तोड़ती है, कोई जल पीकर वारि जाती है। कोई गाने पर, कोई नृत्य पर रीझ रही है। वृन्दावनदासजी कहते हैं कि कोई सखी दोनों को लाड़ करने में व्यस्त है।

अब श्री किशोरीजी पर निद्रा का ऐसा वेग छा जाता है कि उनकी पलकें अपने आप ही गिरने लगती हैं। उनकी यह दशा देखकर सखियाँ सचेत हो जाती हैं कि अब श्री प्रिया-प्रियतम को शयन कक्ष की ओर शीघ्रातिशीघ्र पधारने के लिए प्रार्थना करनी चाहिए। उनका शयन और कुछ नहीं, उनकी परम-पावन, परम गहन महाभाव की दशा है, जिसमें डूबकर वे प्रत्येक जीव के अंतःकरण में रस का संचार करते रहते हैं।

वारति अलि मृगनैंनी आरति ।
निज सहचरि इच्छा अनुसारनि समझि सैंन की सैना बैंनी ।।
जगमग जोति जगति दीपावलि कनक थार मधि सचित सुचैंनी ।
श्रीहरिप्रिया हितवाय हियनि में लै बलाय सनमुख सुख दैंनी ।।

भावार्थ - मृगनैनी सखी श्रीप्रिया-प्रियतम की आरती उतार रही है। अपनी सखी के आँखों का निद्रापूर्ण संकेत समझ रही है। सुन्दर सजी हुई सोने की थाली के मध्य में आरती का दीपक दीपावली की ज्योति की भाँति जगमगा रहा है।

लँड़ैती जू के नैननि नींद घुरी ।
आलस-बस, जोबन बस, मद-बस, पिय के अंक ढुरी ।।
पिय कर परस्यौ सहज चिबुक सौ औचक चैकि परी ।
बावरी सखी 'हित व्यास' सुवन बल देखत लतन दुरी ।।

भावार्थ - श्री लाड़लीजू के नयनों में नींद भरी हुई है। आलस, यौवन और मद के नशे में मग्न होकर वे प्रियतम की गोद में लुढ़क गईं। श्री श्यामसुन्दर ने हलके से जब उनकी ठोड़ी का स्पर्श किया तब किशोरी अचानक चौंक के उठ गईं। हित व्यास जी कहते हैं कि बावरी सखी इस सारे दृश्य को फूलों की लताओं में छिपकर देख रही हैं।

सुनो प्यारी हो कुँवरि राधे, निकुंजन पौढ़िये सकुमार ।
भलो रस हो रास में आज, रह्यौ तुम्हरी कृपा अनुसार ।।
रैन अबहो बहुत थोरी रह्यो तजि केलि चतुर सुजान ।
रसिक प्रीतम सदा मेरो हा-हा हँसि कहो कृपानिधान ।।

भावार्थ - एक सखी कहती हैं - 'हे राधाकिशोरी! प्रियतम सहित निकुंज में शयन करने की कृपा करें। आज आपकी कृपा से रास में अत्यन्त सुन्दर रस का प्रवाह बहा है। रात अब बहुत थोड़ी रह गई है। इसलिए, हे चतुर, हे सुजान, रास केलि को छोड़ दीजिए। कवि रसिक के निज प्रियतम श्रीकृष्ण ने (हाँ-हाँ कहकर) हँसते हुए अपनी सहमति प्रदान की।

आनन्द रहो ब्रज चंद्र दोऊ शुभ सगुन सदा तुमको आवें।
नित ही रस केलि करो मिलिके हम निरखि निरखि अतिशय सुख पावैं।।
यह धन हमसे रंकन को मिल्यो हम कहा लौं विधाता के गुण गावें।
नारायण आशीष करें हम तुमहूँ पौढ़ो हमहूँ जावे।।

भावार्थ - सखियाँ गाती हैं - हे श्रीयुगल! आप सदा आनन्दित रहें, सभी शुभ शगुन आप पर ही आयें। आप नित्य ही रस केलि करते रहें, एवं हम देख-देख कर आनन्दित होते रहें। यह धन (आपकी सेवा) हम जैसे दरिद्रों को मिला, इसके लिये हम कहाँ तक विधाता के गुण गायें। नारायणदास जी कहते हैं कि सखियाँ आशीष देती हुई विनती करती हैं कि आप भी शयन करें और हम भी आपको एकान्त में छोड़ दें।

कुंज पधारौ राधे! रँग भरी रैन ।
रँगभरी दुलहिन, रंग भरे पिय स्यामसुन्दर सुखदैन ।।
रँगभरी सयनी बिछी सेज पर, रँग भर्यौ उलहत मैन ।
रसिक बिहारि पिय प्यारी दोऊ मिल, करौ सेज सुख सैन ।।

भावार्थ - कुँज पधारो राधे, आनन्द भरी रात्रि हो। एक ओर प्रेम भरी दुलहन है, दूसरी ओर प्रेम से भरे सुख देने वाले प्यारे श्यामसुन्दर हैं। सुखद सेज बिछी हुई है ऐसा रंग भरा हुआ है जो कामदेव के सुख को भी उलाहना दे रहा है। रसिक बिहारी जी प्रार्थना करते हैं कि प्रिया-प्रियतम दोनों मिलकर सुखद सेज पर शयन करें।

हौले हौले महल की धरती चरण धरंत ।
अति मदमाति लाडली गजगत लिएँ डुलंत ।।
लाडली लाल के मदमाती गजगत लिएँ डोले ।
मरकत मणि के अहल-महल में चरण धरत हौले-हौले ।।
लटकी लट अटकी अंसनि पर चटकीली चख लौले ।
लसन हसन में दसन सिखर दुति रंगी रंग तमोले ।।
झुक-झुक देत-लेत अधरामृत समरस पान कपोले ।
श्री हरिप्रिया हितवाय जियन में वारत प्राण अमोलें ।।

भावार्थ - धीरे-धीरे महल की भूमि पर पग रखते हुए श्रीप्रिया-प्रियतम मदमस्त चाल से चल रहे हैं। मरकत मणि से सजे हुए महल में वे चरण रखते हुए मन्द गति से चले जा रहे हैं। झूमती हुई लटें कन्धे पर ही उलझकर रह गई और चमकती हुई आँखें झुकने लगीं। मनमोहक हँसी में दाँतों की सफेदी पान के रंग में रग गई है। श्रीप्रिया-प्रियतम झुक-झुककर परस्पर अधरामृत का पान करते हैं तथा उनके कपोलों में पान का बीड़ा सुशोभित है। श्रीहरि प्रियाजी का हृदय प्रेम से भर रहा है। तथा उनका सारा तन, मन और धन इस अनुपम छवि पर न्यौछावर जा रहा है।

अब पौढ़न कौ समय भयो ।
इत ढुर गई द्रुमन की छैयाँ उत ढुरि चंद गयो ।।
पौढ़ि रहे दोउ सुखद सेज पर बाढ़त रंग नयो ।
रसिक बिहारि बिहारिन पौढ़े यह सुख दृगन लयो ।।

भावार्थ - अब रात्रि शयन करने का समय हो गया। इधर वृक्षों की छाया ढल गयी है और उधर चन्द्रमा भी अस्ताचल की ओर चले गये हैं। सुखदायनी शय्या पर दोनों लेटे हुए हैं। प्रतिक्षण अभिनव आनन्द की अभिवृद्धि हो रही है। कवि रसिक कहते हैं कि लीलाबिहारी श्रीकृष्ण और बिहारनि राधा, दोनों ही शय्या पर लेटे हुए हैं। इस झाँकी के दर्शन का सुख आँखों को प्राप्त हुआ है, यह कैसा अनुपम सौभाग्य है।

राधे कृष्ण राधे कृष्ण कृष्ण कृष्ण राधे राधे ।
राधे श्याम राधे श्याम श्याम श्याम राधे राधे ।।
जय वृन्दावन जय यमुना, जय वंशीवट जय वृन्दा ।
जय जय जय राधा अभिराम, जय जय जय माधव गुणधाम ।।
जय जय पावन नन्दग्राम, जय बरसाना पूरणकाम ।
जय रासेश्वरी रूप ललाम, जय रसिकेन्द्र शिरोमणि श्याम ।।

इस संपूर्ण रासोत्सव के माध्यम से तत्सुख-सुखिया भाव की मूर्तिमान स्वरूपा, श्री किशोरीजी की यही चेष्टा होती है कि जो भी जीव उनसे तनिक भी जुड़ा है, उसके आंतरिक स्वरूप, उसकी जीवात्मा को प्रियतम श्री कृष्ण का स्पर्श-सुख प्रदान कर उसे निहाल कर दें। अपनी करुणामयी स्वामिनी के इस रस-दान से भाव-विभोर होकर सखियाँ उनके चरणों की वंदना करने लगती हैं।

धनि धनि लाड़िली के चरन।
अतिहि मृदुल सुगंध सीतल कमल के से बरन।।
नख चंद चारू अनूप राजत जोत जगमग करन।
कुणित नूपुर कुंज बिहरत परम कौतुक करन।।
नंद सुत मन मोद कारी बिरह सागर तरन।
दास परमानंद छिन छिन स्याम ताकी सरन।।

भावार्थ - श्रीलाडिली के चरण ही परम धन हैं। वे कमल के समान कोमल एवं सुगन्ध से युक्त हैं। उनके नखों से चन्द्रमा के समान प्रकाश निकल रहा है, तथा सुंदर नूपुर बाँधे वे कुञ्जों में विहार करती हुई विभिन्न लीलाएँ करतीं हैं। श्री राधा के चरण, नंदनंदन के विरह ताप को हरने वाले हैं। परमानंददास जी कहते हैं कि श्यामसुन्दर क्षण-क्षण में श्रीजी के उन चरणों की शरणागती ग्रहण करते हैं।

।।श्रीराधा राधा राधा राधा।।

स्फुट पद :

प्रिय नख चरन चंद्रिका कब धौं, इन नैनान निहारौंगी ।
सुन्दर सुघर रुचिर रचि जावक, कब प्रिय पाँय पखारौंगी ॥
पायजेब सजि नूपुर कब धौं, पग बिछियान सवारौंगी ।
ललित माधुरी चरन सरोजैं, चाँपि कबै उर धारौंगी ॥

भावार्थ - श्री प्रियाजी के चरण नख की ज्योति को कब निहारुंगी? उन चरणों में सुंदर मेहंदी की रचना करके कब उन्हे सहलाऊँगी? सुंदर पायजेब, नूपुर एवं बिछिया पहनाकर कब उन्हें सवारुंगी? (श्री ललित माधुरीजी मन में अभिलाषा करते हैं कि) कब उन चरण कमलों को हृदय में धारण करूंगी?

रहो मेरी आँखनके आगे ।
छहियाँ कदम दिये गल बहियाँ, क्या सोवत क्या जागे ॥
मृदु मुसक्यात गात अति कोमल, सुरत रंग अँग पागे ।
ललित किशोरी रसिक बिहारी नवल नेह अनुरागे ॥

भावार्थ - (सखी प्रार्थना करती है कि) आप दोनों मेरी आखों के सामने ही रहिए। कदंब वृक्षकी छाँह में गलबहियाँ दिए हुए आपकी छबि को निहारते रहने में क्या सोना और क्या जागना? (श्री ललित किशोरीजी कहते हैं कि) आप दोनों अतिशय कोमल मुस्कान से युक्त हैं और आप दोनों के अंगों में विहार करने की अभिलाषा झलक रही है। उसपर भी प्रियतम श्री कृष्ण पल-पल नवीन प्रेम में रंगते जा रहे हैं।

ये अभिलाष लडैती मोरी ।
तुम लालन संग मुदित बिराजौ, मोहि करो मुख चन्द्रचकोरी ॥
देहु कृपा करि बेग छबीली, ललित किशोरी मान निहोरी ।
निसिदिन नित्त निकुंज भवनमें, हाजिर रहौं वृषभान किशोरी ॥

भावार्थ - हे श्री लडिलीजी! मेरी ऐसी अभिलाषा है की आप श्री लालजी के सँग प्रसन्नतापूर्वक विराजित रहें, और में आपके मुख चंद्र को चकोरी के समान निहारती रहूँ। हे छबीली श्री राधे! कृपा कर मुझे अपने निकुंज में नित्य निवास प्रदान कीजिए। मैं सदा आपकी कृतज्ञ रहूँगी और सेवा के लिए प्रस्तुत रहूँगी।

श्रीबृन्दाबन बसौं निरन्तर, यही चित्त अभिलासा है ।
जुगल माधुरी पान करौं नित, छिन छिन यही हुलासा है ॥
सदा बसन्त जहाँ नव पल्लव, इक रस बारौ मासा है ।
ललित माधुरी ललित त्रिभंगी, ललितहिं रास बिलासा है ॥

भावार्थ - श्री वृंदावन में वास करूँ, यही अभिलाषा है। श्री युगल की रूप-माधुरी को पीता रहूँ, मन में यही उत्साह है। (श्री ललित माधुरीजी कहते हैं कि जहां ऋतु बसंत सदा ही नव-पल्लव लिए बारहों मास उपस्थित रहता है, उस स्थान पर ललित त्रिभंगी मुद्रा लिए श्री कृष्ण ललित रास विलास करते रहते हैं।

प्यारी नित ऐसेहिं तुम्हें निहारू ।
तृण तोरूँ या चंद बदन पै, राई नोन उतारूं ॥
निज कर करूँ सिंगार तिहारो, मुख पै भ्रमर बिडारूँ ।
नारायण जब तुम कछु गावो, मैं ढिंग साज सवारूं ॥

भावार्थ - हे प्यारी! में नित्य ही तुम्हें ऐसे ही निहारती रहूँ! तृण तोड़कर एवं राई-नामक उतारकर (अर्थात नजर उतारकर) तुम्हारा श्रृंगार करूँ, एवं (तुम्हारे सुंदर मुख को कमल समझकर आकर्षित हुए) भ्रमरों को हटाती रहूँ। (श्री नारायण स्वामीजी अभिलाषा करते हैं कि) हे किशोरीजी! जब तुम कुछ गाओ, तब मैं सुंदर साज सजाकर तुम्हारे साथ बजाऊँ।